ऋतुवर्णन

यद्यपि राजस्थान देश के विवरण में ऋतुओं का बहुत कुछ वर्णन आ गया है परंतु उस प्रसंग में केवल वर्षा और ग्रीष्म के ही उदाहरण दिए गए हैं क्योंकि ये ही दो ऋतुएँ राजस्थान में अधिक विशेषता रखती हैं। एक अपनी सुखदाता, सौंदर्य और उपकारिता के लिये राजस्थान का जीवनप्राण है, दूसरी अपनी विशेष उग्रता और भंयकर आंतक से राजस्थान के विशेष भयंकर रूप को सामने लाती है। इनके अतिरिक्त राजस्थानी वर्षाऋतु की कुछ और विशेषताओं का अन्य स्थलों पर वर्णन हुआ है, जो संक्षेप में नीचे उद्धृत की जाती हैं। परंतु, जैसा कि आगे कहा जा चुका है, इस बात को भूलना नहीं चाहिए कि ऋतुओं का प्रसंग नायक नायिका के विरहविलापों में नीर क्षीर न्याय से मिला हुआ है। स्वतंत्र रूप में ऋतु के लिये ऋतु का वर्णन कहीं भी नहीं हुआ है।

वर्षावर्णन—मारवणी सखियों से अपनी विरहदशा व्यक्त करती हुई कहती है—

राजा परजा, गुणिय जण, कवि जण, पंडित, पात।
सगळां मन ऊछब हुअउ, बूठैतौ बरसात ॥४०॥

Scanned by CamScanner

बीजुळियाँ चहालावलि, आभय आभय कोडि ।
कद रे मिलउँली सज्जना, कस कंचूकी छोडि ॥४६ ॥

उन्नमियउ उतर दिसइँ, काळी कंठलि मेह ।
हूँ भीजूँ घर अंगणइ, पिउ भीजइ परदेह ॥४३ ॥

जळ थळ, थळ जळ हुइ रह्यउ, बोलइ मोर किगार ।
सावण दूभर हे सखी, किहाँ मुझ प्राण अधार ॥४९ ॥

उतर दिशा से काली काली घटाएँ उमड़ आई हैं और मूसलाधार बरसने लगी हैं । चारों ओर जल ही जल हो रहा है, आकाश के चारों कोनों में करोड़ों बिजलियाँ चमक रही हैं । ऐसे सुसमय में क्या राजा, क्या प्रजा, क्या गुणिजन, पंडित और क्या वनस्पति सभी को आंतरिक आनंद प्राप्त होता है ।

माळवणी ढोला के संवाद में वर्षा का चित्र इस प्रकार खींचा गया है—

पगि पगि पाँणि पंथसिर, ऊपरि अंबर छाँह ।
पावस प्रगट्यउ पदमिणी, कहउ त पूगल जाँह ॥२४४ ॥

लागे साद सुहाँमणउ, नस भर कुंझड़ियाँह ।
जळ पोइणिए छाइयउ, कहउ त पूगळ जाँह ॥२४ ॥

मेहाँ बूठाँ अन बहळ, थळ ताढा जळ रेस ।
करसण पाका, कण खिरा, तद कउ बळण करेस ॥२६४ ॥

ऊँचउ मंदिर अति घणउ आवि सुहावा कंत ।
बीजळि लियइ झबूकड़ा, सिहराँ गळि लांगत ॥२६८ ॥

रास्तों में जगह जगह पर स्वच्छ वर्षाजल की तलैया भरी लहराती है जिनके चारों ओर रातभर कुरझें कलरव करती हुई बड़ी सुहावनी प्रतीत होती हैं, रह रहकर पपीहा बोल उठता है । ढोला कहता है, इससे सुंदर समय प्रस्थान के लिये दूसरा कौन सा हो सकता है । परंतु माळवणी की राय में ऐसे समय में घर ही पर रहना अधिक उचित है जब खेती पक रही हो और भूमि वर्षा से तृप्त होकर जल जैसी शीतल हो रही हो । जब बिजलियाँ चमक चमककर पर्वत शिखरों से लिपट रही हों तब ऊंचे महलों में सुखपूर्वक प्रेम में मग्न रहना ही चाहिए ।

हरे भरे लहराते हुए बाजरे के विस्तृत खेतों के बीच बीच में नाना प्रकार की बेलें फैल रही हैं, श्रावण के महीने में मारू देश की सांध्यकालीन छटा बड़ी ही अनुपम हो रही है, हरे भरे पर्वत प्रदेशों में स्थान स्थान पर मयूर नाच गा रहे हैं, कहीं पर चिकनी भूमि पर ऊँट के फिसलने का भी डर रहता है, रह रहकर वायु के शीतल झोंके हृदय में उल्लास पैदा करते हैं । सचमुच, राजस्थानी लोग इस ऋतु में स्वर्गोपम आनंद का उपभोग करते हैं । बादलों से समय समय पर बौछार

वनस्पति और मानवजीवन के लिये अमृत संजीवनी का कार्य करती है । बरसाती क्षुद्र नदियों और नालों में जल कलकल करता हुआ प्रवाहित होता है । आकाश में जिधर दृष्टि उठाकर देखो बिजलियों की चहल पहल बड़ी सुहावनी लगती है । वर्षा से प्रक्षालित होकर पर्वतशिखर हरित परिधान और रंग-बिरंगे पुष्पों के आभूषण धारण कर लेते हैं; सरोवर भर जाते हैं और नदी नाले तरंगों से आंदोलित होते रहते हैं; मेंढक अपनी सुमधुर रट अलग ही लगाए रहते हैं और बिजलियाँ चमक चमककर पर्वत शिखरों का आलिंगन करती हैं । क्या जड़ और क्या चेतन, प्रकृति की समस्त सृष्टि में संयोग और विश्वमैत्री का दृश्य चारों ओर दृष्टिगोचर होता है । ऐसी है राजस्थान की वर्षा ऋतु ।

शीतवर्णन—शीतऋतु के वर्णन में राजस्थान की अधिक विशेषता नहीं झलकती । यह वर्णन सार्वदेशिक और साधारण सा है । कुछ उदाहरण उद्‌धृत किए जाते हैं—

जिणि रिति मोती निपजइ सीप समंदाँ माँहि ॥२८१ ॥

जिणि दीहे तिल्ली त्रिड़इ, हिरणी झालइ गाभ ॥२८२ ॥

जिणि रित नाग न नीसरइ, दाझइ बनखँड दाह ॥२८४ ॥

दिन छोटा, मोटी रयण, थाढा नीर पवन्न ॥२८५ ॥

उत्तर आज न जाइयइ, जिहाँ स सीत अगाध ।
ता भइ सूरिज डरपतउ, ताकि चलइ दखिणाध ॥३०१ ॥

राजस्थान का शीतकाल यद्यपि अल्पस्थायी होता है परंतु कष्टसह्य होता है । जब पाला पड़ने लगता है तो घोड़ों की रक्षा के लिए उनकी पीठ पर पाखर डाल दी जाती है । शीतकाल संयोगी प्रेमियों को सुखदायी और विरहियों को दुःखदायी होता है । समुद्रों में सीप के गर्भ में मोती पैदा होते हैं, तिल के पेड़ों में बीज पड़कर फलियाँ चटखने लगती हैं और हरिणियों को गर्भाधान इसी ऋतु में होता है । सर्प इस ऋतु में बिलों से बाहर नहीं निकलते, वन कठोर शीत के कारण झुलसकर झंखाड हो जाते हैं । रातें बड़ी और दिन छोटे हो जाते हैं और पवन और जल का शीतलत्व काटने लगता है । उत्तर दिशा की शीतल पवन के झोंके मरुस्थली पर उगी हुई वनस्पति को जला देते हैं । पाला इतने जोर का पड़ता है कि लोग अग्नि, प्रेयसी और मद्य का सेवनकर शीत से बचाव करते हैं । और तो और, इस कठोर सर्दी के भय से बिचारे सूर्य को भी दक्षिण दिशा के उष्ण ... शरण लेनी पड़ती है ।